सम्पादक की कलम से

बकरी परेशान है। उसका नाम वोटर लिस्ट में नहीं है और जंगल के चुनाव होने हैं। बकरी को विश्वासनुमा भ्रम है कि उसके वोट से जंगल का राज बदल सकता है। जंगल में चुनाव हैं। सियार को वोटर लिस्ट ठीक करने का काम देखना है। शेर ने जिम्मेदारी के सारे ऐसे काम जिनसे जंगलराज चला करता है, सियारों को सौंप रखे हैं। पाल रखे हैं सियार। इन्हें जंगलराज के आला अफसर कह लें। वे दखते हैं कि जंगल का राज जंगलराज की तरह चलता रहे। जंगलराज को जंगलराज बनाए रखने में बड़ा दिमाग लगता है जनाब। सियारों का साथ न हो तो शेर को मुश्किल आ जाए।

चुनाव होने वाले हैं और जंगल में बेवजह ही सनसनी-सी है क्योंकि चुनने के लिए कुछ खास है ही नहीं। बकरी को शेर, चीतों, भेड़ियों और जंगली सुअर आदि के बीच से ही चुनाव करना है कि कौनसा पैने दांत वाला इस बार उनका राजा बनेगा। जंगली-लोकतंत्र में जानवरों को यह अधिकार है कि चुनें कि वे शेर का शिकार होंगे कि चीते या भेड़िए के? जंगल में इसे ही चुनाव कहते हैं । किसके हाथों कत्ल होना है, इसका चुनाव। जीने का हक देने को जगत तत्पर नहीं। मौत चुनने का हक देता है जंगल। जंगल के प्राणियों को दांतों के बीच चुनाव करना है। किसके दांत। बस,यही। पैने सभी के हैं। मजबूत भी। इसके बावजूद जंगल में चुनावों का बड़ा हल्ला रहता है और बकरी, खरगोश, हिरन, नीलगाय, गिलहरियों एवं पंछियों को गलतफहमी रहती है कि वे चुनाव के जरिए जंगल को बदल डालेंगे। इसलिए वोटर लिस्ट में नाम न पाकर बकरी परेशान है। वोट द्वारा जंगल को बदलने की तमन्ना है बकरी की। अदनी सी जान है बकरी की। पर वोट पूरा है। जंगल के लाकतंत्र का यही पहलू चमत्कारी है कि यहां बकरी का भी एक ही वोट है और शेर का भी। यह बात अलहदा है कि ऐसी सैकड़ों बकरियों को खा चुका है शेर और इस गणित से देखें तो एक शेर सैकड़ों वोटों के बराबर ताकत रखता है

चिंतित बकरी ने सियार के दफ्तर में शिकायत दर्ज की है कि हमारा नाम ही नहीं है वोटर लिस्ट में। दफ्तर में सियार, भेड़िए, सांप इत्यादि बैठे हैं। 'अरे'सियार ने आश्चर्य प्रकट किया फिर सियार ने दरयाफ्त करना शुरू किया... बकरी बहन का नाम कैसे रह गया भाई? सर्वे वाला गीदड़ तो आया था न? ऐसा तो नहीं कि जब वे पहुंचे हों तो आप घर पर न रही हों, चरने निकल गई हों?' नहीं, नहीं वे तो हमारी फोटू भी खींच के ले गए थे,' बताने लगी बकरी।' सभी बकरियों के फोटू भी तो एक जैसे दिखते हैं। कन्फ्यूजन हो जाता है दफ्तर में। हो सकता है कि आपका फोटू किसी और के फार्म पर चिपक गया हो' फिर? '...आप चिंता न करो बहन।..आप अपनी एप्लीकेशन छोड़ जाओ। हम ठीक कर देंगे। आप तो ठाठ से वोट देने जाना।...शेरजी का सिंहासन आप लोगों के वोटों पर ही तो टिका है। शेर जी के मन में तो बकरियों के उत्थान के लिए न जाने क्या-क्या योजनाएं चल रही हैं। वे तो आपके लिए घास के बड़े-बड़े मैदान बनवाने की सोच रहे हैं, जिसमें खूब ऊंची घास हो।....मेमनों पर विशेष ध्यान है। उनके लिए भी.... 'वैसे बकरी जानती है शेर के इरादे। पर चुप रहना ही बेहतर। राजा जब शेर हो और आपको जंगल में रहना हो तो मौन का अपना महत्व होता है।बकरी एप्लीकेशन लगाकर चुपचाप चली गई। वोट द्वारा बदलेगी वह, यह सब। इसी विश्वास के साथ लौट रही है वह। वोट से बात बनेगी।

जाती हुई बकरी को बेहद रुचिपूर्वक देखता रहा सियार। 'क्या सोच रहे हैं सरकार?' सियार के भी चमचे हैं, पूछ रहे हैं। 'सोच रहा हूं कि घास के मैदान में घास जितनी ऊंची और घनी होगी उतनी ही आसानी से शेरजी बकरी का शिकार कर सकेंगे।' सियार ने बताया। बकरियों के कल्याण के लिए बनी सारी योजनाएं इसी तरह बनाई जाती है कि अंतत: वे शेरों के काम आ सकें। 'और मेमने?' किसी ने पूछ लिया। '.....अरे उनका तो कहना ही क्या। मेमनों का मांस बड़ा स्वादिष्ट। मेमनों को मेमना रहते ही पकड़ लो तो जीवनभर स्वाद देते हैं। राजनीति में युवा गुर्गे तैयार करना हो तो उन्हें मेमनों की उम्र में पकड़ना होता है।' सियार ने बताया। 'फिर नाम डाल दें इस बकरी का।' 'डाल दो, डाल दो।..इन बकरियों के वोटों से ही तो शेर राजा बनता है।...और इन बकरियों का सारा हिसाब बस इसी एक लिस्ट में ही तो रहता है वर्ना तो जंगल में किसे परवाह कि कहां कितनी बकरियां हैं, न ही किसी को परवाह कि उनमें से शेर ने कितनी खा लीं और कितनी बची हैं। शेर खा भी ले पर वोटर लिस्ट में नाम रहेगा। अभी यह जो बकरी का नाम तुमने वोटर लिस्ट में चढ़ाया है, क्या पता कि रास्ते में चुनाव से पहले ही शेर इसे चुन ले। बकरियों को मुगालता रहता है कि वे राजा को चुनती हैं जबकि असलीयत यही है कि जंगल के हर कोने में दांत उसे चुनते हैं।....सो नाम तो बकरी का डाल ही दो....' सियार जंगल की राजनीति का मानो निचोड़ बता रहा है। वोटर लिस्ट ठीक की जा रही है। बकरियां खुश हैं। इधर पैने दांत वालों को खूब पता है कि चुनाव जीतने पर दांतों को बहुत काम करना है। सो दांत और पैने किए जा रहे हैं। सो बकरियों के अलावा शेर भी खुश हैं। जंगल के लोकतंत्र का यही तो मजा है कि यहां चुनाव के बहाने बकरियां खुश रहती हैं और बकरियों को खाकर शेर भी।

जंयती

अम्बेडकर की आखिरी विरासत

आंबेडकर पहले भारतीय थे जिन्हें विदेशी विश्वविधालय से अर्थशास्त्र की डिग्री प्राप्त हुई थी । आंबेडकर कानून के श्रेष्ठतम ज्ञाता थे, सामाजिक क्रांतिकारी तो थे ही, वे श्रेष्ठ प्रशासक एवं दार्शनिक भी थे । विश्व के समस्त लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले देशों में , भारत का संविधान अकेला है जिसके लेखक के रूप में डॉ आंबेडकर जैसे एक व्यक्ति का नाम जुड़ा हैं । शेष अन्य संविधान या तो एक लंबी प्रक्रिया के बीच विकसित हुए है या कानूनविदों के समूहों ने बनाए हैं । कहने के लिए भारत में भी एक संविधान सभा थी तथा एक ड्राफ्टिंग कमेटी जिसके चेयरमैन डॉ आंबेडकर थे । तकनीकी रूप से डां आंबेडकर की देखरेख में ड्राफ्टिंग कमेटी ने मूल ड्राफ्ट तैयार कर दिया होगा जिसका संपादन करके डॉ आंबेडकर ने अपने हस्ताक्षर बैठा दिये होगें । बहुत से समीक्षक इसी तकनीकी आधार पर, इन्हें संविधान का मूल लेखकर मानने से इन्कार करते हैं, पर श्री टीटी कृष्णामाचारी जो स्वयं ड्राफ्टिंग कमेटी के सदस्य थे, ने संविधान पूरा हो जाने पर संविधान सभा को संबोधित करते हुए कहा था कि यह हाउस संभवत: इस बात से अवगता होगा कि जिन सात सदस्यों को नामित किया गया था, एक ने त्याग-पत्र दे दिया, जिसकी जगह किसी और ने ली । एक की मृत्यु हो गई और वह जगह भरी नहीं गई एक सदस्य अमेरिका के दौरे पर चले गए, जिनकी जगह खाली पड़ी रही। एक अन्य सदस्य राजकीय काम में लगे रहे । एक या दो सदस्य दिल्ली के बाहर से थे और संभवत: स्वास्थ्य खराब होने के कारण बैठकों में भाग नहीं ले पाते थे । अतत: हुआ ऐसा कि संविधान ड्राफ्ट करने की सारी जिम्मेदारी डॉ आंबेडकर पर ही आ पड़ी। भारतीय समाज की अकृतज्ञता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि इस देश को इतना उत्कृष्ट संविधान देने वाले महापुरूष डॉ आंबेडकर लोकसभा का चुनाव दो बार हार गए। दूसरी और 4 जुलाई 1776 को अमेरिका आजादी की घोषणा पत्र ड्राफ्ट करने वाले थामस जैफरसन अमेरिका के दो बार राष्ट्रपति चुने गए । भारतीय समाज अपने जातीय पूर्वाग्रहों के चलते अपने नायकों एवं खलनायकों के बीच बुद्धिमत्तापूर्ण अंतर नहीं कर पाया।

खैर, यदि गैर दलित समाज डॉ आंबेडकर की विरासत को नहीं मानता है तो यह बात समझ में आती है, पर वर्तमान भारत में दलित भी कहां और किस तरह से डॉ आंबेडकर को समझते एवं अपनाते हैं । डॉ आंबेडकर का व्यक्तित्व सागर जैसा गहरा, पर्वत जैसा उंचा एवं आकाश जैसा व्यापक है । उनकी विरासत अंतहीन है, इतनी विविध कि किसी एक पर सहमत हो जाना आसान नहीं है। पर यह बात स्पष्ट हैं कि डॉ आंबेडकर मानव मुक्ति के दार्शनिक थे, जिसमें दलितों की मुक्ति के साथ-साथ गैर दलितों की मुक्ति भी निहित है । गैर दलित भी अब जातीय तनाव से त्रस्त हैं । जातिविहीन समाज में ही इनका भला है। गैर दलित समाज इस सच्चाई को माने या न माने, दलित समाज इसे मानता भी है और समझता भी है। पर मुक्ति की सर्वांगीण मार्ग क्या है, इस पर दलित भी एकमत नहीं हैं । हाल के वर्षों में धर्मांतरण एवं बौद्धधर्म के प्रति आकर्षण एक अहम प्रश्न के रूप में उभर चुका है । जाहिर है न्याय की अवधारणाओं पर खड़े हुए बौद्धिज्म के प्रति दलितों का स्वाभाविक रूझान होगा, खास तौरपर तब जबकि डॉ आंबेडकर ने स्वयं ही इस धर्म को अपना लिया।

धर्म सदैव ही अध्यात्म का विकल्प होता है, सामाजिक, राजनीतिक या आर्थिक आंदोलनों का नहीं । अपने तर्कों के पक्ष में यह खेमा 14 अक्टूबर 1956 की उस घटना को बार बार दोहराता है, जब बाबा साहब आंबेडकर ने बौद्धधर्म को ग्रहण किया। इस धर्मांतरण समारोह को बाबा साहब की आखिरी एवं निर्णायक विरसत के रूप में प्रचारित किया जाता है । इसमें कोई संदेह नहीं है कि 14 अक्टूबर की घटना बाबा साहब के जीवन एवं कर्म की एक महानतम घटना थी, पर इसे आखिरी विरासत मान लेना इतिहास सम्मत नहीं होगा और न ही उनके प्रति ईमानदारी बरतना होगा ।

डॉ आंबेडकर ने मई 1956 में ही 14 अक्टूबर को बौद्धधर्म ग्रहण करने की घोषणा कर दी थी एवं अपनी घोषणा को अंजाम भी दिया। फिर दो माह बाद ही 6 दिसम्बर 1956 को उनका देहावसान हो गया । इसकी आखिरी विरासत को समझने के लिए इस गुत्थी को समझना जरूरी है कि डॉ आंबेडकर ने आरपीआई (रिपब्लिकन पार्टी आफ इंडिया) के गठन की तैयारी कर ली थी, जिसका ब्ल्यू प्रिंट भी तैयार कर लिया गया था। इसका मराठी अनुवाद वर्ष 1957 प्रबुद्ध भारत के विशेष अंक में छपा । इसका मूल प्रारूप डॉ आंबेडकर के ग्रंथ 17 भाग दो के पृष्ठ 151-157 पर हू-ब-हू छपा है । इसमें दो बातें स्वयं सिद्ध हो जाती हैं -प्रथम तो यह कि 14 अक्टूबर का धर्मांतरण कार्यक्रम उनकी आखिरी विरासत नहीं है, क्योंकि इसके बाद वे आरपीआई जैसे राजनीतिक दल का गठन करना चाहते थे । द्वितिय यह कि बौद्धिज्म राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक आंदोलनों का विकल्प नहीं हो सकता, इसलिये धर्मांतरण के बाद भी वे एक राजनीतिक दल की स्थापना करना चाहते थे , जिसकी सारी तैयारियां वे कर चुके थे । बहुत सारे दलित चिंतक भारतीय संविधान को डॉ आंबेडकर का योग्यतम मानस पुत्र मानते हैं । इस विचार के सबसे बड़े गवाह डॉ आंबेडकर स्वयं ही हैं । आरपीआई के लक्ष्यों और उद्देश्यों को निर्धारित करते हुए वे सीधे संविधान की और रूख करते हैं तथा संविधान की प्रस्तावना की पंक्तियां हू-ब-हू दोहराते हैं ।

यदि डॉ आंबेडकर के जीवनकाल का अंतिम प्रयास आरपीआई जैसे राजनीतिक दल का गठन था, जिसका मेनिफेस्टो संविधान की प्रस्तावना थी,तो हमें यह मान लेना चाहिये कि भारतीय संविधान ही डॉ आंबेडकर की आखिरी विरासत थी। पॉलिटिकल जस्टिस काफी हद तक प्राप्त हो चुका है, सोशल जस्टिस भी मिलना आरंभ हो गया है । आज का समाज ठीक वैसा ही नहीं है, जैसा संविधान लागू होने के समय 1950 में था । सबसे अधूरा लक्ष्य कोई है तो वह इकॉनामिक जस्टिस का है जिसे प्राप्त करना होगा